भारतीय ज्ञान परंपरा की वर्तमान प्रासंगिकता

डॉ. प्रमोद पडवळ
सहयोगी प्राध्यापक,
हिंदी विभाग,
चांदमल ताराचंद बोरा महाविद्यालय, शिरूर, जिला-पुणे (महाराष्ट्र)
मो. 9767916364 Email- padwalpramod9@gmail.com

सार- भाषा एवं ज्ञान की परंपरा का विकास मनुष्य सभ्यता के विकास की महत्वपूर्ण सीढ़ियाँ है। विश्व के सभी जनजातियों में ज्ञान परंपरा का विकास दिखाई देता है। भारत में भी हजारों सालों से यह ज्ञान परंपरा गतिमान रही। इसमें जीवन के नैतिक, अध्यात्मिक, बौद्धिक पक्ष पर लक्ष्य रखकर सत्य, दया, क्षमा, शांति, नम्रता, आत्मनिर्भरता जैसे मानवीय मूल्यों की शिक्षा निहित थी। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे अनेकों विश्वविद्यालयों, शिक्षा केंद्रों, गुरुकुलों के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपरा प्रवाहित होती रही। मगर समय के साथ, परकीय आक्रमणकारियों के कारण, पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव स्वरूप वर्तमान समय तक आते-आते यह परंपरा खंडित होती गई। आज पर्याप्त भौतिक सुख-सुविधाओं के बावजूद मनुष्य का जीवन अशांत है। मनुष्य आज जीवन जीना ही मानो भूल गया है। इसकी एक वजह अपनी सभ्यता, संस्कृति की उपेक्षा कही जा सकती है। पुराने और आज के समय को तौलनिक दृष्टि से देखने के बाद भारतीय ज्ञान परंपरा को पुन्हा पुनर्जीवित करके प्रवाहमान करना वर्तमान समय की दरकार दिखाई देती है, चूंकि भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल में समूची मानव जाति के उन्नयन की कामना रही है, जो कि आज के व्यक्तिवादी, उपभोक्तावादी संस्कृति एवं सभ्यता में नदारद है।

बीज शब्द- ज्ञान परंपरा, सभ्यता का विकास, लोक साहित्य, ज्ञान और विज्ञान, गुरुकुल, मौखिक परंपरा, पुरुषार्थ, भौतिक और आध्यात्मिक सुख, अवरुद्ध, संस्कृति, भारतीयता, वैश्वीकरण, अंधानुकरण, मूलाधार, मानव मूल्य, विश्व बंधुत्व, राष्ट्रीय शिक्षा नीति।

प्रस्तावना- मानव जाति के विकास में भाषा तथा ज्ञान का अनन्यसाधारण महत्व है। अन्य प्राणियों से मनुष्य ने इन्हीं के कारण अपनी अलग पहचान बनाई है। अपने अनुभव से प्राप्त ज्ञान का विस्मरण न हो और भावी पीढ़ी के लिए उसका उपयोग हो इसके लिए मनुष्य ने ग्रंथों का निर्माण किया। ग्रंथों के विकास की प्रारंभिक अवस्था में पत्ते, ताम्रपत्र, शिलालेख आदि ज्ञान संग्रह के संवाहक बने। कागज के आविष्कार के बाद पुस्तकें ज्ञान धारा की संवाहक बनी। इसके समानांतर मौखिक रूप से भी ज्ञान परंपरा प्रवाहित होती रही। 'लोक साहित्य' के रूप में इसे अभिहित किया जाता है। समयानुरूप लोक साहित्य रूपी मानव विकास की यही धरोहर लुप्त होती गई। मगर आज के मानवी जीवन को देखने के बाद भारतीय ज्ञान परंपरा की आवश्यकता समझ में आती है। भारतीय ज्ञान परंपरा की इसी प्रासंगिकता का भारतीय ज्ञान परंपरा का स्वरूप, भारतीय ज्ञान परंपरा की विशेषता, भारतीय ज्ञान परंपरा की उपेक्षा, भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता इन मुद्दों के आधार पर विस्तृत विवेचन औचित्यपूर्ण रहेगा।

भारतीय ज्ञान परंपरा का स्वरूप- भारतीय ज्ञान परंपरा हजारों वर्ष पुरानी है। इसमें वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, गीता, पुराण तथा धर्म शास्त्रों का विशेष महत्व है, जिसमें ज्ञान और विज्ञान, लौकिक और पारलौकिक, कर्म और धर्म, भोग और त्याग आदि का अद्भुत समन्वय है। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, काशी, उज्जैनी आदि विश्व प्रसिद्ध शिक्षा एवं शोध के प्रमुख केंद्रों में विश्व के समस्त समुदायों एवं प्राणी मात्र के कल्याण की शिक्षा दी जाती थी।इन केंद्रों में देश-विदेश के हजारों शिक्षार्थी ज्ञानार्जन के लिए आते थे। आर्यभट्ट, चरक, पतंजलि, सुश्रुत, कात्यायन, बोधायन, कणाद, वाराहमिहिर, नागार्जुन, अगस्त्य, भर्तृहरि, शंकराचार्य, पाणिनि जैसे अनेकों महापुरुषों ने भारत भूमि पर जन्म लेकर अपनी मेधा से भारतीय ज्ञान परंपरा की समृद्धि में अतुल्य योगदान दिया है। महिलाएँ भी इस क्षेत्र में पीछे नहीं थी। मैत्रेयी, गार्गी, ऋतुंबरा, अपाला,लोपामुद्रा आदि अनेक विदुषियों ने भारतीय ज्ञान परंपरा की संवाहक बनकर मानव जाति के उत्थान में अपूर्व कार्य किया है।

प्राचीन काल में भारत में तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, काशी, उज्जैनी, उदांत पुरी, सोमपुरा, पुष्पगिरी जैसे अनेकों विश्वविद्यालयों के साथ-साथ गुरुकुलों के माध्यम से भी शिक्षा दी जाती थी। भारतीय ज्ञान परंपरा में गुरुकुल शिक्षा पद्धति का महत्वपूर्ण स्थान है। पुराने जमाने में गुरुकुल शिक्षा के प्रमुख आधार स्तंभ थे। गुरुकुल में विद्यार्थियों को वेद, उपनिषद, पुराण, व्याकरण, नीति शास्त्र, धर्मशास्त्र, युद्ध शास्त्र, न्यायशास्त्र, कला, राजनीति, दर्शन आदियों का ज्ञान दिया जाता था। यह पद्धति "मनसा, वाचा और कर्मणा" पर आधारित थी। इसमें व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनीतिक, भावात्मक आदि विकास पर लक्ष्य केंद्रित किया जाता था तथा आत्मनिर्भरता, नम्रता, सत्य, अहिंसा, सेवा, प्रेम आदि मूल्यों के सृजन पर बल दिया जाता था। गुरुकुल के अतिरिक्त घर, मंदिर, मठ आदि जगहों में भी संस्कार युक्त शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा ग्रहण करने का आधार मुख्यतः मौखिक ही होता था। ज्ञान प्राप्ति के लिए संसाधनों के अभाव में भारतीय ज्ञान प्रणाली के प्रचार-प्रसार के लिए 'मौखिक परंपरा' का महत्व अनन्यसाधारण है। शिक्षार्थियों को जो पढ़ाया जाता था उसे वह याद करके मनन करते थे और भावी पीढ़ी को विरासत के रूप में सौंप देते थे। घर-परिवार और समाज में विभिन्न प्रकार के लोकगीत, लोककथा, लोकगाथा आदियों के माध्यम से ज्ञान प्रणाली को पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित किया जाता था, जिसका मूल उद्देश्य शिक्षा के साथ-साथ संस्कार एवं व्यवहार ज्ञान देना था।

भारतीय संस्कृति की 'पुरुषार्थ चतुष्टय सिद्धांत' एक महत्वपूर्ण विशेषता है। पुरुषार्थ चतुष्टय का मतलब धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से है। इसकी संरचना भारत के ऋषि-मुनियों और दार्शनिक-विद्वानों ने मानव जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक दृष्टि से उन्नत करने के लिए की थी। जीवन में भौतिक सुख के साथ-साथ आध्यात्मिक सुख भी महत्वपूर्ण माना गया है। धर्म, अर्थ, काम इन तीनों पुरुषार्थ को अच्छी तरह कर लेने से ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है ऐसा माना गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा में इसी पुरुषार्थ संकल्पना की शिक्षा भी महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। अर्थात अनादि काल से भारतीय शिक्षा व्यवस्था का स्वरुप मनुष्य के व्यावहारिक एवं दैनंदिन जीवन को सुचारू रूप से संचालित करने के साथ-साथ जीवन के महत उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक दिखाई देता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की विशेषता- भारतीय ज्ञान परंपरा पुरातन युग से मानव जाति को समृद्ध करती आ रही है। यह वैज्ञानिक और व्यावहारिक चिंतन पर आधारित है, जो विश्व बंधुत्व की भावना से ओतप्रोत है।

इसमें ज्ञान और विज्ञान, लौकिक और पारलौकिक, कर्म और धर्म, भोग और त्याग का अद्भुत समन्वय है। भारतीय प्राचीन ज्ञान प्रणाली जीवन के नैतिक, भौतिक, अध्यात्मिक और बौद्धिक स्तर पर केंद्रित होकर नम्रता, आत्मनिर्भरता, अनुशासन, दया, क्षमा, सत्य जैसे मानवीय मूल्यों पर जोर देती है। इसमें शिक्षार्थियों को मानव, प्राणियों एवं प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखना सिखाया जाता था। परिवार और समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करने का अनुदेश इसमें दिखाई देता है।

भारतीय प्राचीन शिक्षा प्रणाली व्यक्ति के मानसिक और शारीरिक विकास पर समान जोर देती थी। जब समूचा विश्व अज्ञान रूपी अंधकार में भटकता था तब भारत के मनीषी उच्चतम ज्ञान का निर्माण एवं प्रसार करके मानव जाति को श्रेष्ठ संस्कार देकर संपूर्ण मानव बनाने में प्रयासरत थे। हजारों साल पहले जब कई सभ्यताएँ केवल खानाबदोश जीवन जीती थी तब भारत वर्ष में सिंधु घाटी सभ्यता में हड़प्पा, मोहनजोदड़ो जैसी प्रगत संस्कृतियों का जन्म हुआ। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे अनेकों विश्वविद्यालयों, शिक्षा केंद्रों का निर्माण भारत की प्राचीन सभ्यता एवं ज्ञान परंपरा के निदर्शक हैं। इन सभी विश्वविद्यालयों, शिक्षा केंद्रों तथा गुरुकुलों में व्यक्ति के उन्नयन के साथ-साथ समूची मानव जाति का हित सन्निहित था। "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया:..." की प्रार्थना इसी का परिचायक कहा जा सकता है।

भारतीय साहित्य, संस्कृति, दर्शन की परंपरा हजारों साल पुरानी है। वेद, उपनिषद, पुराण आदियों से आज ज्ञान की कई परतें खुल रही हैं। इन सब का आधार संस्कृत भाषा आज विश्व की सबसे वैज्ञानिक भाषा मानी जाती है। संस्कृत भाषा में निर्मित साहित्य आज विश्व को दिशा दे रहा है। विदेशी लोगों द्वारा संस्कृत भाषा का अध्ययन मनुष्य जीवन की उन्नति हेतु होता दिखाई देता है। वेद, आयुर्वेद, योग यह प्राचीन ज्ञान प्रणालियाँ आधुनिक दनिया में उपयोगी सिद्ध हो रही है। भारतीय प्राचीन ज्ञान परंपरा में अनेकों ऐसे नाम मिलते हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान का लाभ मनुष्य की प्रगति एवं समृद्धि के लिए किया। महर्षि चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट द्वारा चिकित्सा क्षेत्र में किया योगदान अनूठा है। प्राचीन ज्ञान परंपरा का आयुर्वेद एक महत्वपूर्ण भाग है। भारत द्वारा विश्व को दी गई यह अमूल्य देन है। महर्षि पतंजलि द्वारा प्रसारित 'योग' आज विश्व भर में 'योगा' के रूप में प्रसिद्ध हो रहा है, जो मूलतः भारत की धरोहर है। भास्कराचार्य, बौधायन, ब्रह्मगुप्त, आर्यभट्ट, श्रीधराचार्य आदियों की बदौलत आज गणित, संख्या शास्त्र, खगोल शास्त्र उन्नत हुए हैं। इसी प्रकार कौटिल्य या चाणक्य का अर्थशास्त्र तथा राजनीतिक दृष्टि से योगदान महत्वपूर्ण है, जिसके कारण वर्तमान में अनेक आयाम खुल गए हैं। इसी प्रकार वास्तु-कला, शिल्प-कला जैसे अनेक विषयों में भी भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान का प्रचुर भंडार निहित है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की उपेक्षा-सर्वश्रेष्ठ, समृद्ध, वैज्ञानिक रही भारतीय ज्ञान परंपरा समय के साथ अवरुद्ध होती गई। इसके मूल में प्रमुखतः राजनीतिक कारण रहे। भारत की स्वर्णिम धरती पर विभिन्न आक्रमणकारियों ने आक्रमण करके न केवल धन-संपत्ति को लूटा, बल्कि यहाँ की संस्कृति, सभ्यता को भी मिटाने की कोशिश की। इनमें प्रमुख आक्रांता थे- यूनानी, शक, हूण, महमूद गजनवी, मुहम्मद गोरी, तैमूर, बाबर, नादिर शाह, अंग्रेज। इन आक्रमणकारियों के कारण भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक व्यवस्था पर भारी आघात पहुँचा। हूणों ने तक्षशिला विश्वविद्यालय को नष्ट किया तो बख्तियार खिलजी ने नालंदा विश्वविद्यालय को आग लगा दी, जिसमें हजारों पुस्तकें जलकर राख हो गई। ऐसे अनेकों आघातों से प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा के विभिन्न उपादान नष्ट होकर ज्ञान परंपरा की अपरिमित क्षति हुई।

किसी भी देश के उत्थान में संस्कृति अहं होती है। आक्रमणकारी सबसे पहले संस्कृति एवं सभ्यता पर हमला करके सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन अशांत करता है। अतएव भारतवर्ष में भी अक्रांताओं ने हमेशा ही स्थानीय संस्कृति को नष्ट करके अपनी संस्कृति थोपने का प्रयास किया। भारत में तुर्की, मुगल आक्रमणों के दौरान हमलावरों ने भारत की अखंडता की जड़ संस्कृति, धार्मिक विश्वास स्थल आदि को पहचाना और लोगों का मनोबल तोड़ने के लिए इन पर आघात कर मंदिरों की जगह मस्जिदें खड़ी कर दी। बारंबार होते आक्रमणों एवं दहशत से परंपरागत मान्यताएँ चरमरा गई। मध्ययुग में सांस्कृतिक संक्रमण के चलते भारतीय ज्ञान परंपरा को भी बाधा पहुँची।

भारतीय ज्ञान परंपरा को खंडित करने का सबसे बड़ा दुष्कार्य अंग्रेजों के द्वारा हुआ। जब भारत पर अंग्रेजों ने शासन शुरू किया तो उन्हें महसूस हुआ कि भारत की ताकत उसकी संस्कृति एवं शैक्षिक व्यवस्था है। जब तक यहाँ की शिक्षा प्रणाली को ध्वस्त नहीं किया जाएगा तब तक यहाँ पर प्रभुत्व प्रस्तावित नहीं किया जा सकता। इसलिए उन्होंने एक ओर तो कुटिल नीतियों के जरिए यहाँ के संस्थानों को समाप्त किया, तो दसरी ओर अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का महिमामंडन करके भारत की शिक्षा पद्धति को तुच्छ बताकर उसे समाप्त किया। लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति से भारतीय शिक्षा प्रणाली समाप्त होकर भारतीय ज्ञान परंपरा भी खंडित हो गई।

अंग्रेज शासन काल में अंग्रेजी शिक्षा ग्रहण कर चुके तथाकथित बुद्धिवादी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को हीन दृष्टि से देखने लगे। धीरे-धीरे इनकी तादाद बढ़ती गई और भारतीय ज्ञान परंपरा अपेक्षित रहती गई। फिर आजादी के बाद आधुनिक युग में भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण के चलते पाश्चात्य सभ्यता, संस्कृति के मोह में पढ़ी-लिखी शिक्षित पीढ़ी भारतीयता के महत्व को भूल गई। लेकिन अब जनता धीरे-धीरे जाग रही है। उसकी आंखों से पाश्चात्य संस्कृति के बड़प्पन का पर्दा हट रहा है, क्योंकि उसे पता चल रहा है कि आधुनिक प्रगति का मूलाधार भारत की ज्ञान परंपरा से जुड़ा है। इसलिए भारतीय ज्ञान परंपरा के अध्ययन एवं अध्यापन की ओर समूचा विश्व आज अग्रसर दिखाई देता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता- ब्रिटिश काल से हमारे यहाँ प्रचलित शिक्षा प्रणाली सदैव भारतीय ज्ञान को ओछा और पाश्चात्य ज्ञान को सर्वोपरि सिद्ध करने का कार्य करती रही है और यही कारण है कि स्वतंत्रता के बाद भी हम अपनी ज्ञान परंपराओं की महत्ता से अनभिज्ञ रहे। हमारा दर्शन, अध्यात्म हमें परिपूर्ण जीवन की राह बताने में सक्षम होते हुए भी हमने उन्हें दरकिनार किया। आयुर्वेद हमारी चिकित्सा प्रणाली का मूलाधार होते हुए भी हमारी नजरों से ओझल रहा। जब पाश्चात्यों ने उसका महत्व जानकर उस पर और संस्कृत भाषा पर अनुसंधान शुरू किया तब हमारी आंखें खुल गई। मसलन हमें अपनी जड़ी-बूटियाँ, नीम, हल्दी और गोमूत्र का ख्याल तब आता है जब अमेरिका इनसे जुड़े कई पेटेंट अपने नाम करवा लेता है। यही हाल योग का भी है। योग जब 'योगा' बनाकर विश्व भर में छा जाता है तब हम उसका महत्व समझते हैं।

आज भारत की विभिन्न प्रथा-परंपराएँ अपनी वैज्ञानिकता से पाश्चात्य संस्कृति में पले-बढ़े लोगों को आकृष्ट कर रही है, तो वही पाश्चात्य अंधानुकरण के मोह में अंधे हो चुके भारतीयों को भारतीय संस्कार दकियानूसी लग रहे हैं। यथा जहाँ विदेशी विवाह और परिवार का महत्व समझकर शादी के बंधन में बंध रहे हैं, वही हमारे युवा 'लिव इन रिलेशनशिप' को तवज्जो दे रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति की भोगवादी सभ्यता से हमारी युवा पीढ़ी क्षणभंगुर आनंद में जीवन की इतिश्री मान रही है। इस 'यूज एंड थ्रो' सभ्यता के प्रभाव से हमारे त्याग, सेवा, समर्पण, प्रेम, भाईचारा, आदर जैसे मानव मूल्य नष्ट हो रहे हैं। 'स्व' वादी दृष्टिकोण के बढ़ते महत्व से पारिवारिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक सौहार्द खतरे में पड़ गया है। समूचे विश्व में मानव जाति पर यह सबसे बड़ा संकट है। इससे उबारना है तो भारत की प्राचीन ज्ञान परंपराओं का

अध्ययन जरूरी है, चूंकि इसी परंपरा में मनुष्य के सर्वोच्च एवं अंतिम लक्ष्य के साथ-साथ मनुष्य जीवन की पूर्णता का मार्ग छिपा है। आज मानव जाति 'जियो और जीने दो' वाले संस्कार भूल गई है। अपनी तरह दूसरों को जीने का अधिकार वह नकार रही है। चारों ओर प्रभुत्व की लड़ाई छिड़ी हुई है। क्या मनुष्य, क्या समाज और क्या राष्ट्र सभी इस जंग में मानवता भूल गए हैं। घर-परिवार अशांत, समाज अशांत और देश भी अशांत। विश्वभर में यही अशांति मानव जाति के लिए खतरा बन रही है। इसका उपाय हमारी प्राचीन ज्ञान परंपरा में निहित है, क्योंकि इसमें वैज्ञानिक और व्यावहारिक चिंतन पर बल दिया है। यह ज्ञान परंपरा 'विश्व बंधुत्व' की भावना से ओतप्रोत है तथा विश्व के समस्त समुदायों एवं प्राणी मात्र के कल्याण की भावना इसमें अंतर्भूत है। इसी के मद्देनजर भारत में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस ज्ञान परंपरा के अध्ययन एवं अध्यापन पर बल दिया है, ताकि हम अपनी सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रख सके। साथ ही वर्तमान समस्याओं से भी निजात पा सके।

आज मनुष्य विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों से जूझ रहा है। नीत नई बीमारियों से मनुष्य का जीवन खतरे में पड़ गया है। कैंसर, डायबिटीज, हार्ट अटैक जैसी अनेकों शारीरिक और डिप्रेशन, स्ट्रेस, एंजायटी जैसी भिन्न मानसिक बीमारियों के चलते मनुष्य न जीवन जी पा रहा है, न जीवन का आनंद ले पा रहा है। चिंता, आशा, तृष्णा, काम वासना से ग्रसित मनुष्य सार्थक जीवन नहीं जी रहा है। इन सबसे निजात पाने की दृष्टि से भारतीय ज्ञान परंपरा प्रासंगिक है, क्योंकि हमारी प्राचीन ज्ञान परंपरा के वेद, उपनिषद, गीता, पुराण, आयुर्वेद, योग आदि शास्त्रों में मनुष्य को शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक स्तर पर सुदृढ़ बनाने के गुर विद्यमान हैं। बशर्ते उसके अनुपालन की आवश्यकता है।

निष्कर्ष-निष्कर्षतः कहा जाए तो हजार वर्ष पुरानी भारतीय ज्ञान परंपरा धर्म, साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, कला, कर्म, उपासना, योग, अध्यात्म, भोग, तपस्या आदि सभी प्रकार के ज्ञान का अद्भुत संगम है। वेद, उपनिषदादि विभिन्न ग्रंथों में विद्या को मनुष्य जीवन का श्रेष्ठ अंग स्वीकार करते हुए मनुष्य को ज्ञानवान बनाने का प्रयास होता रहा है। यह ज्ञान परंपरा केवल भारतवर्ष के लोगों तक सीमित नहीं है, अपितु 'विश्व बंधुत्व' की भावना इसमें निहित है। मनुष्य एवं समाज का संबंध, मनुष्य जीवन का लक्ष्य एवं उसका उत्तरदायित्व, मनुष्य का शारीरिक, भौतिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास आदि मानव जीवन से जुड़े विभिन्न अंगों के लिए भारतीय ज्ञान परंपरा पथप्रदर्शक रही है। हजारों वर्षों बाद भी इसका महत्व कम नहीं हुआ है। भारतीय ज्ञान परंपरा 'वसुधैव कुटुंबकम' की भावना से आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी पहले थी। अब यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम अपनी इस विरासत का खुद तो लाभ उठाएँ ही, साथ ही दुनिया भर में उसका प्रचार-प्रसार करके भारत को फिर से 'विश्व गुरु' के पद पर आसीन करें। और मानव जाति की रक्षा एवं विकास के लिए यही कदम उचित होगा इसमें कोई दो राय नहीं है।

****

आधार ग्रंथ :-

1. https://www.wikipedia.org/
2. https://hindimedia.in/bharatiya-gyan-pranali-ki-prasangikata/
3. https://www.jagran.com/editorial/apnibaat-ncr-the-imperative-of-indian-knowledge-tradition-in-the-education-system-22412895.html
4. https://www.myresearchjournals.com/index.php/SRJIS/article/view/10029
5. https://indiafoundation.in/articles-and-commentaries/ancient-indian-knowledge-systems-and-their-relevance-today-with-an-emphasis-on-arthasastra/
6. https://rashtriyashiksha.com/indian-knowledge-tradition-and-national-education-policy/

....

बैगा जीवन शैली में पारंपरिक ज्ञान और शब्द-संपदा

डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय& डॉ. रुचि मिश्रा तिवारी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, रबींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय
भोपाल,
ईमेल: arunkpandey2@gmail.com
प्रोफेसर, मानविकी एवं उदारकला संकाय, रबींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय
भोपाल,
ईमेल: ruchivishesh@gmail.com

सारांश : प्रस्तुत शोध पत्र मध्य भारत की अत्यंत प्राचीन और विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (PVTG) 'बैगा' के सांस्कृतिक जीवन, उनके पारंपरिक ज्ञान (Traditional Knowledge) और उससे जुड़ी विशिष्ट शब्द-संपदा का विश्लेषण करता है। स्वयं को 'माटी-पुत्र' और पृथ्वी का प्रथम मानव मानने वाले बैगाओं का जीवन पूर्णतः प्रकृति और वनों पर आधारित है। बैगाओं का पारंपरिक ज्ञान विशेष रूप से उनके 'बेवर' (स्थानांतरित खेती), औषधीय जड़ी-बूटियों के गहन ज्ञान और 'गुनिया' या 'देवार' द्वारा की जाने वाली जादुई-धार्मिक उपचार पद्धतियों में परिलक्षित होता है।

अध्ययन यह रेखांकित करता है कि बैगाओं की जीवन शैली उनकी भाषा 'बैगानी' में रची-बसी है, जिसमें दैनिक दिनचर्या, भोजन और सामाजिक संबंधों के लिए अनूठे शब्दों का भंडार है। उदाहरण के तौर पर, उनके भोजन में 'पेज' (कोदो-कुटकी का घोल), दिनचर्या में 'मुखारी' (दातुन करना), 'मुरगल' (दोपहर का भोजन) और 'बियारी' (रात का खाना) जैसे शब्द उनकी संस्कृति की विशिष्टता को दर्शाते हैं। साथ ही, शोध पत्र यह भी स्पष्ट करता है कि आधुनिकता, बाहरी समुदायों से संपर्क और औपचारिक शिक्षा के प्रभाव के कारण यह पारंपरिक शब्द-संपदा और ज्ञान अब लुप्त होने के कगार पर है। इस शोध का मुख्य उद्देश्य बैगा जनजाति की इस अमूर्त विरासत का दस्तावेजीकरण करना और इसके संरक्षण की आवश्यकता पर बल देना है।

बीज शब्द : बैगा जनजाति, पारंपरिक ज्ञान, शब्द-संपदा, बैगानी बोली, बेवर खेती, नृवंशविज्ञान (Ethnography), सांस्कृतिक परिवर्तन।

परिचय : बैगा जनजाति मध्य भारत की एक अत्यंत प्राचीन और विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (PVTG) है। ये मुख्य रूप से मध्य प्रदेश के डिंडोरी, मंडला, बालाघाट और छत्तीसगढ़ के कबीरधाम एवं मुंगेली जैसे जिलों के दुर्गम पहाड़ी और वन क्षेत्रों में निवास करते हैं। बैगा स्वयं को 'माटी-पुत्र' (धरती के पुत्र) और इस पृथ्वी पर जन्म लेने वाला प्रथम मानव मानते हैं। उनकी मान्यता है कि भगवान ने उन्हें धरती की रक्षा करने और उसे उपजाऊ बनाए रखने के लिए बनाया है।

बैगाओं की जीवन शैली पूर्णतः प्रकृति और वनों पर आधारित है। वे अपने पारंपरिक ज्ञान के लिए पूरे विश्व में विख्यात हैं, जिसमें 'बेवर' (स्थानांतरित कृषि) और औषधीय जड़ी-बूटियों का गहन ज्ञान शामिल है। बैगा समाज में 'गुनिया' या 'देवार' का विशेष महत्व है, जो न केवल पुजारी के रूप में कार्य करते हैं, बल्कि जादुई-धार्मिक पद्धतियों और जड़ी-बूटियों के माध्यम से रोगों का उपचार भी करते हैं। उनकी संस्कृति की अन्य विशिष्ट पहचान में पुरुषों के लंबे लहराते बाल (जूड़ा) और बैगा महिलाओं के शरीर पर बने विस्तृत गोदना (Tattoo) चिन्ह शामिल हैं, जिन्हें वे मृत्यु के बाद भी साथ जाने वाला आभूषण मानते हैं। भाषाई दृष्टि से, बैगा 'बैगानी' बोली बोलते हैं, जो छत्तीसगढ़ी का ही एक रूप मानी जाती है और इंडो-आर्यन भाषा परिवार से संबंधित है। उनकी यह बोली उनके पारंपरिक ज्ञान, लोककथाओं और लोकगीतों